

मरु-गुर्जर की उत्पत्ति—‘मरु-गुर्जर’ शब्द यौगिक है जो मरु और गुर्जर के योग से बना है। अतः इन शब्दों का यहीं पर परिचय देना भी समीचीन होगा। ये दोनों शब्द प्रदेश, भाषा और साहित्य के लिए प्रयुक्त हुए हैं अतः इनका परिचय उपरोक्त तीनों आयामों में दिया जायेगा।

मरु—राजस्थान का सबसे बड़ा भाग मरु प्रदेश या मारवाड़ है। इस प्रदेश की भाषा का प्राचीन नाम मरुभाषा या मरुवाणी प्राप्त होता है। टेस्सीतूरी की डिंगल यही मरुभाषा है। यह एक महत्वपूर्ण भाषा थी। जैनाचार्य उद्योतनसूरि कृत कुवलयमाला (वि० सं० ८३५) में प्रादेशिक भाषाओं के नमूनों के साथ मरुभाषा का भी उल्लेख मिलता है। अबुल-फजल ने ‘आईन-ए-अकबरी में मारवाड़ी भाषा को तत्कालीन भाषाओं में महत्वपूर्ण स्थान दिया है। इसका साहित्य प्राचीन और समृद्ध है किन्तु यह समस्या भी है कि राजस्थान की किस बोली को राजस्थानी कहा जाय। राजस्थान में सामन्ती-स्थिति बहुत दिनों तक बनी रही, पूँजीवाद का विकास यहां बाद में हुआ, अतः भिन्न-भिन्न राजस्थानी रियासतों में वहां की स्थानीय बोली-भाषा को प्रोत्साहन दिया गया, समग्र राजस्थान में किसी एक बोली को साहित्यिक गौरव नहीं दिया गया। फलतः समूचे राजस्थान में बहुत समय तक पुरानी हिन्दी या डिंगल-पिंगल में काव्य रचना होती रही।

स्वतन्त्रतापूर्व राजस्थान के विभिन्न प्रदेशों के अलग-अलग नाम थे जिनमें जांगल, सपादलक्ष, मत्स्य, मेदपाट, बागड़, गुर्जरत्रा और मरु विशेष प्रसिद्ध थे। अंग्रेजों ने तमाम छोटे-छोटे राज्यों को एक राजनीतिक इकाई में बांधकर इस समूह का नाम राजपूताना रखा। सन् १९०० ई० में जार्ज टामस ने ‘मिलिट्री मेमॉयर्स’ में राजस्थान शब्द का प्रयोग किया है। इसके उपरान्त कर्नल टॉड ने राजस्थान का इतिहास लिखा जो अति प्राचीन और गौरवशाली है। प्राचीन मंदिरों, मूर्तियों और शिलालेखों की प्राप्ति यहां सर्वाधिक संख्या में हुई है। यहां के राजदरबारों में देशी भाषा-साहित्य, संगीत और कलाओं को पर्याप्त प्रश्रय मिला। यहां अतिप्राचीनकाल से साहित्य सृजन का कार्य प्रारम्भ होने का प्रमाण प्राप्त होता है। यहीं सर-स्वती नदी के किनारे ऋषियों ने ऋचायें लिखीं, महर्षि कपिल ने यहीं सांख्य मत का प्रवर्तन किया। यहां पुस्कर, श्रीमाल आदि अतिप्राचीन तीर्थ हैं। यहां संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, पुरानी हिन्दी एवं राजस्थानी में